

## अध्याय ४२

### महासमाधि की ओर ( १ )



भविष्य की आगाही, रामचन्द्र दादा पाटील और तात्या कोते पाटील की मृत्यु टालना, लक्ष्मीबाई शिन्दे को दान, समस्त प्राणियों में बाबा का वास, अन्तिम क्षण।

बाबा ने किस प्रकार समाधि ली, इसका वर्णन इस अध्याय में किया गया है।

### प्रस्तावना

गत अध्यायों की कथाओं से यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि गुरुकृपा की केवल एक किरण ही भवसागर के भय से सदा के लिये मुक्त कर देती है तथा मोक्ष का पथ सुगम करके दुःख को सुख में परिवर्तित कर देती है। यदि सद्गुरु के मोहविनाशक पूजनीय चरणों का सदैव स्मरण करते रहोगे तो तुम्हारे समस्त कष्टों और भवसागर के दुःखों का अन्त होकर जन्म-मृत्यु के चक्र से छुटकारा हो जाएगा। इसलिये जो अपने कल्याणार्थ चिन्तित हों, उन्हें साईं समर्थ के अलौकिक मधुर लीलामृत का पान करना चाहिए। ऐसा करने से उनकी मति शुद्ध हो जाएगी। प्रारम्भ में डॉक्टर पंडित का पूजन तथा किस प्रकार उन्होंने बाबा को त्रिपुंड लगाया, इसका उल्लेख मूल ग्रन्थ में किया गया है। इस प्रसंग का वर्णन ११ वें अध्याय में किया जा चुका है, इसलिये यहाँ उसको दुहराना उचित नहीं है।

### भविष्य की आगाही

पाठकों! आपने अभी तक केवल बाबा के जीवन-काल की ही कथाएँ सुनी हैं। अब आप ध्यानपूर्वक बाबा के निर्वाणकाल का वर्णन सुनिये। २८ सितम्बर, सन् १९१८ को बाबा को साधारण-सा ज्वर आया। यह ज्वर २-३ दिन तक रहा। इसके उपरांत ही बाबा ने भोजन करना बिल्कुल त्याग दिया। इससे उनका शरीर दिन- प्रतिदिन क्षीण

एवं दुर्बल होने लगा। १७ दिनों के पश्चात् अर्थात् १५ अक्टूबर, सन् १९१८ को २ बजकर ३० मिनट पर उन्होंने अपना शरीर त्याग किया। (यह समय प्रो. जी.जी. नारके के तारीख ५-११-१९१८ के पत्र के अनुसार है, जो उन्होंने दादासाहेब खापर्डे को लिखा था और साईलीला पत्रिका के पृष्ठ ७-८ (प्रथम वर्ष) में प्रकाशित हुआ था)। इसके दो वर्ष पूर्व ही बाबा ने अपने निर्वाण के दिन का संकेत कर दिया था, परन्तु उस समय कोई भी समझ नहीं सका। घटना इस प्रकार है। विजयादशमी के दिन जब लोग सन्ध्या के समय 'सीमोल्लंघन' से लौट रहे थे तो बाबा सहसा ही क्रोधित हो गए। सिर का कपड़ा, कफनी और लँगोटी निकालकर उन्होंने उसके टुकड़े-टुकड़े करके जलती हुई धूनी में फेंक दिये। बाबा के द्वारा आहुति प्राप्त कर धूनी द्विगुणित प्रज्वलित होकर चमकने लगी और उससे भी कहीं अधिक बाबा के मुख-मंडल की कांति चमक रही थीं। वे पूर्ण दिगम्बर खड़े थे और उनकी आँखें अंगारे के समान चमक रही थीं। उन्होंने आवेश में आकर उच्च स्वर में कहा कि, "लोगों! यहाँ आओ, मुझे देखकर पूर्ण निश्चय कर लो कि मैं हिन्दू हूँ या मुसलमान।" सभी भय से काँप रहे थे। किसी को भी उनके समीप जाने का साहस न हो रहा था। कुछ समय बीतने के पश्चात् उनके भक्त भागोजी शिन्दे, जो महारोग से पीड़ित थे, साहस कर बाबा के समीप गए और किसी प्रकार उन्होंने उन्हें लँगोटी बाँध दी और उनसे कहा कि, "बाबा! यह क्या बात है? देव! आज दशहरा (सीमोल्लंघन) का त्योहार है।" तब उन्होंने जमीन पर सटका पटकते हुए कहा कि, यह मेरा सीमोल्लंघन है। लगभग ११ बजे तक भी उनका क्रोध शान्त न हुआ और भक्तों को चावड़ी जुलूस निकलने में सन्देह होने लगा। एक घण्टे के पश्चात् वे अपनी सहज स्थिति में आ गए और सदा की भाँति पोशाक पहनकर चावड़ी जुलूस में सम्मिलित हो गए, जिसका वर्णन पूर्व किया जा चुका है। इस घटना द्वारा बाबा ने इंगित किया कि जीवन-रेखा पार करने के लिये दशहरा ही उचित समय है। परन्तु उस समय किसी को भी उसका असली अर्थ समझ में न आया। बाबा ने और भी अन्य संकेत किये, जो इस प्रकार हैं -

## रामचन्द्र दादा पाटील की मृत्यु टालना

कुछ समय के पश्चात् रामचन्द्र पाटील बहुत बीमार हो गए। उन्हें बहुत कष्ट हो रहा था। सब प्रकार के उपचार किये गए, परन्तु कोई लाभ न हुआ और जीवन से हताश होकर वे मृत्यु के अंतिम क्षणों की प्रतीक्षा करने लगे। तब एक दिन मध्य रात्रि के समय बाबा अनायास ही उनके सिरहाने प्रगट हुए। पाटील उनके चरणों से लिपट कर कहने लगे कि मैंने अपने जीवन की समस्त आशाएँ छोड़ दी हैं। अब कृपा कर मुझे इतना तो निश्चित बतलाइये कि मेरे प्राण अब कब निकलेंगे? दयासिन्धु बाबा ने कहा कि, 'घबराओ नहीं। तुम्हारी हुण्डी वापस ले ली गई है और तुम शीघ्र ही स्वस्थ हो जाओगे। मुझे तो केवल तात्या का भय है कि सन् १९१८ में विजयादशमी के दिन उसका देहान्त हो जाएगा। किन्तु यह भेद किसी से प्रगट न करना और न ही उसे बतलाना। अन्यथा वह अधिक भयभीत हो जाएगा।' रामचन्द्र अब पूर्ण स्वस्थ तो हो गए, परन्तु वे तात्या के जीवन के लिये निराश हुए। उन्हें ज्ञात था कि बाबा के शब्द कभी असत्य नहीं निकल सकते और दो वर्ष के पश्चात् ही तात्या इस संसार से विदा हो जाएगा। उन्होंने यह भेद बाला शिंपी के अतिरिक्त किसी से भी प्रगट न किया। केवल दो ही व्यक्ति - रामचंद्र दादा और बाला शिंपी, तात्या के जीवन के लिये चिन्ताग्रस्त और दुःखी थे।

रामचंद्र ने शैया त्याग दी और वे चलने-फिरने लगे। समय तेजी से व्यतीत होने लगा। शके १८४० का भाद्रपद समाप्त होकर आश्विन मास प्रारम्भ होने ही वाला था कि बाबा के वचन पूर्णतः सत्य निकले। तात्या बीमार पड़ गए और उन्होंने चारपाई पकड़ ली। उनकी स्थिति इतनी गंभीर हो गई कि अब वे बाबा के दर्शन को भी जाने में असमर्थ हो गए। इधर बाबा भी ज्वर से पीड़ित थे। तात्या का पूर्ण विश्वास बाबा पर था और बाबा का भगवान श्रीहरि पर, जो उनके संरक्षक थे। तात्या की स्थिति अब और अधिक चिन्ताजनक हो गई। वह हिलडुल भी न सकता था और सदैव बाबा का ही स्मरण किया करता था। इधर बाबा की भी स्थिति उत्तरोत्तर गंभीर होने लगी। बाबा द्वारा बतलाया हुआ विजयदशमी का दिन भी निकट आ गया। तब रामचंद्र दादा और

बाला शिंपी बहुत घबरा गए। उनके शरीर काँप रहे थे, पसीने की धाराएँ प्रवाहित हो रही थीं, कि अब तात्या का अन्तिम साथ है। जैसे ही विजयदशमी का दिन आया, तात्या की नाड़ी की गति मन्द होने लगी और उसकी मृत्यु सन्निकट दिखलाई देने लगी। उस समय एक विचित्र घटना घटी। तात्या की मृत्यु टल गई और उसके प्राण बच गए, परन्तु उसके स्थान पर बाबा स्वयं प्रस्थान कर गए और ऐसा प्रतीत हुआ, जैसे कि परस्पर हस्तान्तरण हो गया हो। सभी लोग कहने लगे कि बाबा ने तात्या के लिये प्राण त्यागे। ऐसा उन्होंने क्यों किया, ये वे ही जानें, क्योंकि यह बात हमारी बुद्धि के बाहर है। ऐसा भी प्रतीत होता है कि बाबा ने अपने अन्तिम काल का संकेत तात्या का नाम लेकर ही किया था।

दूसरे दिन १६ अक्टूबर को प्रातःकाल बाबा ने दासगणु को पंढरपुर में स्वप्न दिया कि मस्जिद अर्रा करके गिर पड़ी है। शिरडी के प्रायः सभी तेली तम्बोली मुझे कष्ट देते थे। इसलिये मैंने अपना स्थान छोड़ दिया है। मैं तुम्हें यह सूचना देने आया हूँ कि शीघ्र वहाँ जाकर मेरे शरीर पर हर तरह के फूल इकट्ठा कर चढ़ाओ। दासगणु को शिरडी से भी एक पत्र प्राप्त हुआ और वे अपने शिष्यों को साथ लेकर शिरडी आए तथा उन्होंने बाबा की समाधि के समक्ष अखंड कीर्तन और हरिनाम प्रारम्भ कर दिया। उन्होंने स्वयं फूलों की माला गुँथी और ईश्वर का नाम लेकर समाधि पर चढ़ाई। बाबा के नाम पर एक वृहद् भोज का भी आयोजन किया गया।

### लक्ष्मीबाई को दान

विजयादशमी का दिन हिन्दुओं के लिए बहुत शुभ है और सीमोल्लंघन के लिये बाबा द्वारा इस दिन का चुना जाना सर्वथा उचित ही है। इसके कुछ दिन पूर्व से ही उन्हें अत्यन्त पीड़ा हो रही थी, परन्तु आन्तरिक रूप में वे पूर्ण सजग थे। अन्तिम क्षण के पूर्व वे बिना किसी की सहायता लिये उठकर सीधे बैठ गए और स्वस्थ दिखाई पड़ने लगे। लोगों ने सोचा कि संकट टल गया और अब भय की कोई बात नहीं है तथा अब वे शीघ्र ही नीरोग हो जाएँगे। परन्तु वे तो जानते थे कि

अब मैं शीघ्र ही विदा लेने वाला हूँ और इसलिये उन्होंने लक्ष्मीबाई शिन्दे को कुछ दान देने की इच्छा प्रगट की।

### समस्त प्राणियों में बाबा का वास

लक्ष्मीबाई एक उच्च कुलीन महिला थीं। वे मस्जिद में बाबा की दिन-रात सेवा किया करती थीं। केवल भगत म्हालसापति, तात्या और लक्ष्मीबाई के अतिरिक्त रात को मस्जिद की सीढ़ियों पर कोई नहीं चढ़ सकता था। एक बार सन्ध्या समय जब बाबा तात्या के साथ मस्जिद में बैठे हुए थे, तभी लक्ष्मीबाई ने आकर उन्हें नमस्कार किया। तब बाबा कहने लगे कि, “अरी लक्ष्मी, मैं अत्यंत भूखा हूँ।” वे यह कहकर लौट पड़ीं कि, “बाबा, थोड़ी देर ठहरो, मैं अभी आपके लिये रोटी लेकर आती हूँ।” उन्होंने रोटी और साग लाकर बाबा के सामने रख दिया, जो उन्होंने एक भूखे कुत्ते को दे दिया। तब लक्ष्मीबाई कहने लगीं कि, “बाबा यह क्या? मैं तो शीघ्र गई और अपने हाथ से आपके लिये रोटी बना लाई। आपने एक ग्रास भी ग्रहण किये बिना उसे कुत्ते के सामने डाल दिया। तब आपने व्यर्थ ही मुझे कष्ट क्यों दिया?” बाबा ने उत्तर दिया कि, “व्यर्थ दुःख न करो। कुत्ते की भूख शांत करना मुझे तृप्त करने के बराबर ही है। कुत्ते की भी तो आत्मा है। प्राणी भले ही भिन्न आकृति-प्रकृति के हों, उनमें कोई बोल सकते हैं और कोई मूक हैं, परन्तु भूख सबकी एक सदृश ही है। इसे तुम सत्य जानो कि जो भूखों को भोजन कराता है, वह यथार्थ में मुझे ही भोजन कराता है। यह एक अकाट्य सत्य है।” इस साधारण-सी घटना के द्वारा बाबा ने एक महान् आध्यात्मिक सत्य की शिक्षा प्रदान की कि बिना किसी की भावनाओं को कष्ट पहुँचाये किस प्रकार उसे नित्य व्यवहार में लाया जा सकता है। इसके पश्चात् लक्ष्मीबाई उन्हें नित्य ही प्रेम और भक्तिपूर्वक दूध, रोटी व अन्य भोजन देने लगीं, जिसे वे स्वीकार कर बड़े चाव से खाते थे। वे उसमें से कुछ खाकर शेष लक्ष्मीबाई के द्वारा ही राधाकृष्णमाई के पास भेज दिया करते थे। इस उच्छिष्ट अन्न को वे प्रसाद स्वरूप समझ कर प्रेमपूर्वक पाती थीं। इस रोटी की कथा को असंबद्ध नहीं समझना चाहिए। इससे सिद्ध होता

है कि सभी प्राणियों में बाबा का निवास है, जो सर्वव्यापी, जन्म-मृत्यु से परे और अमर हैं।

बाबा ने लक्ष्मीबाई की सेवाओं को सदैव स्मरण रखा। बाबा उनको भुला भी कैसे सकते थे? देह-त्याग के बिल्कुल पूर्व बाबा ने अपनी जेब में हाथ डाला और पहले उन्होंने लक्ष्मी को पाँच रुपये और बाद में चार रुपये, इस प्रकार कुल नौ रुपये दिये। यह नौ की संख्या इस पुस्तक के अध्याय १२ में वर्णित नवविधा भक्ति की द्योतक है अथवा यह सीमोल्लंघन के समय दी जानेवाली दक्षिणा भी हो सकती है। लक्ष्मीबाई एक सुसंपन्न महिला थी। अतएव उन्हें रुपयों की कोई आवश्यकता नहीं थी। इस कारण संभव है कि बाबा ने उनका ध्यान प्रमुख रूप से श्रीमद्भागवत के स्कन्ध ११, अध्याय १० के श्लोक सं. ६ की ओर आकर्षित किया हो, जिसमें उत्कृष्ट कोटि के भक्त के नौ लक्षणों<sup>१</sup> का वर्णन है, जिसमें से पहले ५ और बाद में ४ लक्षणों का क्रमशः प्रथम और द्वितीय चरणों में उल्लेख हुआ है। बाबा ने भी उसी क्रम का पालन किया (पहले ५ और बाद में ४; कुल ९) केवल ९ रुपये ही नहीं, बल्कि नौ के कई गुने रुपये लक्ष्मीबाई के हाथों में आए-गये होंगे, किन्तु बाबा द्वारा प्रदत्त ये नौ (रुपये) का उपहार वह महिला सदैव स्मरण रखेगी।

### अंतिम क्षण

बाबा सदैव सजग और चैतन्य रहते थे और उन्होंने अन्तिम समय भी पूर्ण सावधानी से काम लिया। उन्होंने अन्तिम समय सबको वहाँ से चले जाने का आदेश दिया। चिन्तामग्न काकासाहेब, बूटी और अन्य महानुभाव, जो मस्जिद में बाबा की सेवा में उपस्थित थे, उनको भी बाबा ने वाड़े में जाकर भोजन करके लौट आने को कहा। ऐसी स्थिति में वे बाबा को अकेला छोड़ना तो नहीं चाहते थे, परन्तु उनकी आज्ञा का उल्लंघन भी तो नहीं कर सकते थे। इसलिये इच्छा न होते हुए भी उदास और दुःखी हृदय से उन्हें वाड़े को जाना पड़ा। उन्हें विदित

१. अमान्यमत्सरो दक्षो निर्ममो दृढसौहृदः।  
असत्त्वरोऽर्थ जिज्ञासुर्नसूयुरमोघवाक् ॥

था कि बाबा की स्थिति अत्यन्त चिन्ताजनक है और इस प्रकार उन्हें अकेले छोड़ना उचित नहीं है। वे भोजन करने के लिये बैठे तो, परन्तु उनके मन कहीं और (बाबा के साथ) थे। अभी भोजन समाप्त भी न हो पाया था कि बाबा के नश्वर शरीर त्यागने का समाचार उनके पास पहुँचा और वे अधपेट ही अपनी अपनी थाली छोड़कर मस्जिद की ओर भागे तथा जाकर देखा कि बाबा सदा के लिये बयाजी आपा कोते की गोद में अंतिम विश्राम कर रहे हैं। न वे नीचे लुढ़के और न शैया पर ही लेटे, अपने ही आसन पर शान्तिपूर्वक बैठे हुए और अपने हाथों से दान देते हुए उन्होंने यह मानव-शरीर त्याग दिया। सन्त स्वयं ही देह धारण करते तथा कोई निश्चित ध्येय लेकर इस संसार में प्रगट होते हैं और जब ध्येय पूर्ण हो जाता है तो वे जिस सरलता और आकस्मिकता के साथ प्रगट होते हैं, उसी प्रकार लुप्त भी हो जाया करते हैं।

॥ श्री सद्गुरु साईनाथार्पणमस्तु। शुभं भवतु ॥

। सप्ताह पारायणः षष्ठ विश्राम।